Shodh Sangam Patrika
ISSN: 3049-0707 Volume 2 | Issue 1 | (Jan – Mar 2025)

छत्तीसगढ़ की जनजातीय संस्कृति में विद्यमान जैव विविधता संरक्षण की परंपरा

नीलम संजीव एक्का
सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र
दाऊ उत्तम साव शासकीय महाविद्यालय, मचांदुर, दुर्ग (छ.ग.) भारत

सारांश

जनजातीय संस्कृति द्वारा जैव विविधता संरक्षण वैश्विक पटल पर अनूठा एवं महत्वपूर्ण विषय है,जो पारंपरिक ज्ञान,सांस्कृतिक धरोहर और प्राकृतिक संसाधनों के सामूहिक प्रबंधन से जुड़ा हुआ है| जनजातीय समुदायों का जीवन न केवल प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से जुड़ा हुआ हैबल्कि यह जैव विविधता के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है| यह शोधपत्र जनजातीय समुदायों की संस्कृति,उनके पारंपरिक ज्ञान और जैव विविधता के संरक्षण की विधियों पर केन्द्रित है| प्रस्तुत शोधपत्र द्वारा यह भी समझाने का प्रयास किया गया है कि आधुनिक विकास,औद्योगिकीकरण और पर्यावरणीय बदलाव इन समुदायों और उनके पारंपरिक ज्ञान को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं।

मुख्य शब्द-जनजातीय समुदाय, प्राकृतिक संसाधन, टोटमवाद, टैबू, जैव विविधता, सरहुल, सोहराई, पारिस्थितिक तंत्र

प्रस्तावना

भारत में जनजातीय समुदायों की उपस्थिति आदिकालीन है। यह समुदाय अपनी सांस्कृतिक धरोहर, पारंपरिक ज्ञान और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन के लिए प्रसिद्ध है| इनका प्राकृति तंत्र के साथ एक गहरा संबंध है जो उन्हें जैव विविधता के संरक्षक के रूप में स्थापित करता है। जनजातीय समुदायों के पास पारंपरिक ज्ञान का भण्डार होता हैजो उनके अनुभव और प्रकृति के साथ संतुलित जीवन के परिणामस्वरूप विकसित हुआ है। यहज्ञान पारिस्थितिकी तंत्र, वन्यजीवों, कृषि विधियों, जल प्रबंधनऔर अन्य प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए उपयोगी होता है। भारतीय जनजातियाँ हजारों वर्षों से विभिन्न पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों, कृषि विधियों और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में शामिल रही हैं। ये समुदाय प्राकृतिक संसाधनों का सम्मान तो करते ही हैं साथ ही उनका संरक्षण करने में अहम भूमिका भी निभाते हैं तथा उनकी उपयोगिता को भी बनाए रखते हैं। वहीं दूसरी ओरनगरीकरण और औद्योगिकीकरण ने पारंपरिक ज्ञान और जीवनशैली को खतरे में डाल दिया हैजिससे जैव विविधता का संकट उत्पन्न हुआ है। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य जनजातीय संस्कृति और जैव विविधता के संरक्षण के बीच आपसी संबंध को उजागर करना है। प्रकृति के प्रति जनजातीय समुदायों की आस्था सरकारों द्वारा निरंतर किए गए संरक्षण के प्रयासों के कारण महत्त्वपूर्ण रही है। यद्यपि सरकार द्वारा चलाए जा रहे संरक्षण के प्रयासों ने आदिवासियों के मन में उस भूमि से बेदखल होने का भय उत्पन्न कर दिया है जिस पर वे दशकों से रहते आए हैं। इस संदर्भ में 'वन अधिकार अधिनियम, 2006' का उचित कार्यान्वयन आवश्यक हैक्योंकि यह अधिनियम आदिवासियों के हितों की रक्षा करने के साथ ही उनके जीवन और आजीविका के अधिकार तथा पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करने की परिकल्पना करता है।

जनजाति प्रकृति संबंध

जनजाति प्रकृति संबंध की अवधारणा तक ऐतिहासिक, दार्शनिक एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण के मार्ग द्वारा पहुंच स्थापित की जा सकती है। जीवन के किसी भी दर्शन के लिए एक ऐतिहासिक और विकासवादी दृष्टिकोण बिंदु का हम तीन अलग-अलग रूप से पहचान कर सकते हैं-

1) प्रकृति के अधीन मनुष्य
2) प्रकृति पर मनुष्य
3) प्रकृति के साथ मनुष्य

धर्म और प्रकृति के बीच सदियों पुराना संबंध पूर्व ऐतिहासिक काल से प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र से जुड़ी विभिन्न पारंपरिक मान्यताओं से स्पष्ट होता है। मान्यताओं को विभिन्न प्राकृतिक तत्वों जैसे पत्थर, चट्टान, जंगल, नदी आदि या जनजातीय धर्म और संस्कृति के आधार पर विशिष्ट पौधेएवं पशु प्रजातियों को सौंपा गया है।

छत्तीसगढ़ के जनजातियों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

छत्तीसगढ़ का प्रागैतिहासिक तथा जनजातीय इतिहास अत्यंत समृद्ध रहा है। उत्तर में रायगढ़ के सिंघनपुर, कबरापहाड़ के शैल चित्र, सरगुजा के रामगढ़ पहाड़ी के जोगीमारा तथा सीताबेंगरा के भीति चित्र सांस्कृतिक विकास की अमूल्य धरोहर है। दक्षिण में बस्तर के महापाषाण संस्कृति के प्रतिरूप में माड़िया जनजाति का "उर्सकल कोटोकल" अनाल गड्या" (मृतक स्मृति स्तंभ) भी जनजातीय संस्कृति की प्राचीनता दर्शाती है।

यद्यपि छत्तीसगढ़ के प्रागैतिहासिक शैलाश्रय, शैलचित्र, गुफाएँ यहाँ आदिमानव सभ्यता का ज्वलंत साक्ष्य प्रस्तुत करती हैंकिन्तु विभिन्न जातियों के ऐतिहासिक साक्ष्यों के अभाव में इन्हें किस जाति के पूर्वजों ने निर्मित किया था कहना कठिन है। इतिहासकारों, भाषाविदों एवं प्राचीन ग्रंथों के आधार पर छत्तीसगढ़ की प्राचीनतम आदिवासी समूह आस्ट्रीक (कोलारियन) समूह के मुण्डा, कोरवा, खरिया, बिरहोर, नगेसिया, सौंता आदि हैं। इनके पूर्वजों का छत्तीसगढ़ में आगमन ईसा पूर्व 3500 माना जाता है। द्रविड़ समूह के जनजाति उरांव, गोंड (मुरिया, मारिया, दोरला, परजा) आदि प्राचीनकाल में सिन्धुघाटी के समीप निवासरत थे ऐसी मान्यता है। इतिहासकारों के अनुसार छत्तीसगढ़ में इनका आगमन लगभग 2500 ईसा पूर्व हुआ है। आर्य तथा उनके साथ निवासरत व्यवसायोपजीवी पुजारी, गौपालक, कृषक, शिल्पी तथा सेवाकार्य में संलग्न जातियों का छत्तीसगढ़ आगमन ईसा पूर्व 1500 में माना गया है। छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र में कृषक, गौपालक, शिल्पी व सेवा में संलग्न जातियों की संस्कृति विकसित हुई। उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्र में क्रमशः आस्ट्रीक तथा द्रविड़ समूह की जनजातीय संस्कृति विकसित हुई और मध्य में विशुद्ध छत्तीसगढ़ीभाषी संस्कृति तथा उत्तर में छत्तीसगढ़ी की उप बोली सादरी भाषी संस्कृति एवं दक्षिण में छत्तीसगढ़ी की उप बोली हल्बी भाषी संस्कृति का विकास माना जाता है।

जनगणना 2011 की जनसंख्या के आधार पर छत्तीसगढ़ के जनजातियों को निम्नलिखित समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

तालिका क्रमांक -1

25 लाख से अधिक	
गोंड एवं उपजातियाँ	42,98404
10 लाख से 25 लाख तक	कोई जनजाति नहीं

5 लाख से 10 लाख तक	
कंवर	8,87477
1 से 5 लाख तक	
हलबा	3,75,182
भतरा	2,13,900
सावरा	1,30,709
कोरवा	1,29,429
बिंझवार	1,19,718
नगेसिया	1,14,532
भूमिया,भूइंहर,भूमिया	1,13,967
50 हजार से 1लाख	
बैगा	89,744
खैरवार	79,816
अगरिया	67,196
माझी	65,027
भैना	55,975
मझवार	55,320
धनवार	50,995

25 हजार से 50 हजार तक	
खरिया	49,032
कमार	26,530
10 हजार से 25 हजार तक	
कोल	20,873
मुण्डा	15,095
पारधी,शिकारी,बहेलिया	13,476
पाव	12,729
परधान	11,111
कोंध	10,991
भुंजिया	10,603
5 हजार से 10 हजार तक	
गदबा	8,535
बियार	5,525
1 हजार से 5 हजार तक	
सौंता	3,502

बिरहोर	3,104
परजा	1,212

छत्तीसगढ़ राज्य जनजातीय और वानस्पतिक विविधता दोनों से समृद्ध है। यहाँ 42 जनजातीय समुदाय एवंपौधों की लगभग 3,000 प्रजातियाँ विभिन्न आवास स्थितियों में पाई जाती हैं। मुख्य वन प्रकार उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती और उष्णकटिबंधीय नर्म पर्णपाती वन हैं। बैगा, भारिया, गोंड, कंवर, खारिया, कोल, कोरवा, नगेसिया, उरांव, सहरिया आदि महत्वपूर्ण जनजातियाँ हैं जो मुख्य रूप से घने जंगलों, पहाड़ों,जंगल के दूरदराजके क्षेत्रों में निवासरत हैं| भोजन, चारा, आश्रय और दवा के लिए लगभग पूरी तरह से जंगलों पर निर्भर हैं वे न केवल वन संसाधनों का विविध उपयोग करते हैं, बल्कि अपनी सांस्कृतिक प्रथाओं, परंपराओं, रीति-रिवाजों, विश्वासों और आस्थाओं के माध्यम से आस-पास की जैव विविधता का संरक्षण भी करते हैं। पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण मुद्दा प्राकृतिक संसाधनों का सतत् प्रबंध बन गया है| सतत् विकास के लिए पर्यावरणीय जैव विविधता का क्षरण और हानि एक गंभीर खतरा है तथा पिछले कुछ दसकों से अंधाधुंध प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और निरंतर चराई के साथ युग्मित मवेशियों की आबादी जैव विविधता के लिए सबसे बड़ा संकटउत्पन्न कर रही है।

छत्तीसगढ़ की जनजातीय संस्कृति

छत्तीसगढ़ के सादरी (छत्तीसगढ़ी की उपबोली) भाषीउत्तरी सांस्कृतिक क्षेत्र, विशुद्ध छत्तीसगढ़ी भाषी मध्य सांस्कृतिक क्षेत्र एवं हल्बी भाषी दक्षिणी सांस्कृतिक क्षेत्र में निवासरत जनजातियों की अपनी विशिष्ट बोली-भाषा पाई जाती है। प्रत्येक जनजाति अपने समूह के सदस्यों के बीचअपनीजनजातीय बोली का प्रयोग करते हैं। किन्तु अन्य जनजातियों या अन्य वर्गों से छत्तीसगढ़ी, सादरी या हल्बी में वार्तालाप होता है। राज्य में गोंड, कंवर एवं उरांव जनजाति की जनसंख्या सर्वाधिक है।गोंड तथा कंवर जनजाति राज्य के तीनों सांस्कृतिक क्षेत्रों एवं पांचों प्रशासकीय संभागों में निवासरत है वहीँ उरांव जनजाति सरगुजा एवं बिलासपुर संभाग में ही निवासरत है।

छत्तीसगढ़ के बस्तर क्षेत्र में गोंड जनजाति के तीन प्रमुख उपजाति निवास करती हैं- मुरिया, बिशनहार्न मुरिया तथा पहाड़ी मुरिया। ये लम्बे अवधि तक झूम कृषि करते रहे हैं। बिशनहार्न मुरिया का नाम नृत्य के समय धारण किए जाने वाली 'शिरो पोशाक' के आधार पर पड़ा है। गोंड जनजाति के धर्म का केंद्र पूर्वज पूजा सहित गांव के देवी-देवताओं और गणचिन्ह(टोटम) की उपासना है। गोंड मृत पूर्वजों की आत्माओं, सर्प-देवताओं, जनजातीय देवताओं आदि की उपासना करते है। इनके मकान की छत चास - फूस या देशी खपरैल की बनी होती है जिसका निर्माण वे स्वयं आपसी सहयोग द्वारा करते हैं।

कवंर जनजाति के लोग प्रकृति की गोद में सरल जीवन व्यतीत करते हैं। इनकी अपनी जीवन शैली, भाषा, संस्कृति तथा परम्पराएँ है। कंवर अपनी उत्पत्ति महाभारत के कौरवों से मानते हैं| सामूहिक जीवन, सामूहिक उत्तरदायित्व और भावात्मक संबंध इस जनजातिकी महत्वपूर्ण विशेषता है,वे परस्पर निःस्वार्थ भाव और स्वभाविक रूप से एक दुसरे की मदत करते हैं। इस जनजाति में कभी व्यापारिक लेन-देन, ब्याज, साहूकार आदि की प्रथा नहीं रही है।

उरांव छत्तीसगढ़ की महत्वपूर्ण जो उत्तर-पूर्वीक्षेत्र में निवासरत है। इनके मकान मिट्टी के तथा छत्त खप्पर एवं घास से बना होता है। करमा, सरहुल,खद्दी,तुसगो,सोहराई आदि उरांवों के प्रमुख पर्व हैं जबकि धर्मेश तथा सरना इनके प्रमुख अराध्य हैं |पर्व के अवसर पर अत्यधिक हर्ष उल्लास के साथ घर की लिपाई (गोबर) से तथा छाबई (थोड़ी सी मिट्टी तथा गोबर) के साथ की जाती है तथा त्योहार के दिन अपने सुविधा अनुसार घर की सजावट की जाती

है।जनजातियाँ कलाकृति में निपुण होती हैं, महिलाएं अपने हाथों के तीन या चार उँगलियों से घरके दीवाल में आकर्षक कलाकृतियाँ बनाती है।

जनजातीय जीवन पद्धति तथा जैव विविधता

1. पारंपरिक ज्ञान और पारिस्थितिकी-जनजातीय समुदायों का पारंपरिक ज्ञान प्राकृतिक संसाधनों का प्रबंधन करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन समुदायों में पारिस्थितिकी तंत्र की गहरी समझ होती हैजो उनके दैनिक जीवन के अनुभव से विकसित होती है।इन समुदायों में जलवायु, मौसम, पौधों और वन्यजीवों के व्यवहार के बारे में अद्वितीय परंपरागत ज्ञान का भंडार होता है।

वनों का संरक्षण-जनजातीय समुदाय अपने पारंपरिक रीति-रिवाजों के माध्यम से जंगलों को संरक्षितकरते हैं। कई आदिवासी समुदाय पवित्र उपवन क्षेत्रों (sacred groves) की परंपरा का पालन करते हैं जहाँ वृक्ष और अन्य प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा की जाती है। इस परंपरा का उद्देश्य न केवल धार्मिक है वरन पर्यावरण का संरक्षण जैसे महत्वपूर्ण मुद्दा भी है।

पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ-जनजातीय समुदाय परंपरागत कृषि पद्धतियाँ अपनाते हैंजिसमें भूमि का संरक्षण, जल का प्रबंधनऔर जैविक कृषि शामिल है। इस प्रकार की कृषि जैव विविधता को बढ़ावा देती है और पारिस्थितिकी तंत्र को स्थिर बनाए रखती है।

2.**सामूहिक प्रबंधन प्रणाली** - जनजातीय समुदायों में संसाधनों का प्रबंधन एवं उपयोग सामूहिक रूप से किया जाता है। यह प्रबंधन प्रणाली पारंपरिक ज्ञान पर आधारित होती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित रूप से उपयोग किए जाएं। सामूहिक प्रबंधन प्रणाली न केवल जैव विविधता के संरक्षण में मदद करती हैबल्कि यह समाज में सामूहिक जिम्मेदारी और सहयोग की भावना को भी बढ़ावा देती है।

3.**जैव विविधता का संरक्षण** -छत्तीसगढ़ की जैव विविधता अत्यंत उच्च स्तरीय हैजो पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। छत्तीसगढ़में निवासरत 32% जनजातीय समुदाय अपनी पारंपरिक प्रथाओं, परम्पराओं के माध्यम से इस उच्च स्तरीय जैव विविधता का संरक्षण करते हैं।

4. पारिस्थितिकी संतुलन-जनजातीय समुदायों का जीवन प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित उपयोग पर आधारित है। उनकी कृषि, वन्यजीव प्रबंधन, जल संसाधन उपयोग आदि प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण में सहायक होते हैं।परिणामस्वरूपइन समुदायों के निवास स्थान जैव विविधता से संपन्न होते हैंक्योंकि वे प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित दोहन करते हैं।

जनजातीय समुदायों की संस्कृति और जैव विविधता के बीच संबंध

छत्तीसगढ़ के जनजातीय समुदायों की संस्कृति का जैव विविधता के बीच गहरा और अभिन्न संबंध है। ये समुदाय प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करते हुए उनके संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहाँ के आदिवासी समाजों में व्याप्त पारंपरिक ज्ञान जो कि प्रकृति के साथ संतुलित जीवन जीने के अनुभव से विकसित हुआ है। यह ज्ञान न केवल प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में सहायक है वरण जैव विविधता के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। इस संबंध को समझना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि जैव विविधता की रक्षा और प्राकृतिक संसाधनों का संतुलित उपयोग आदिवासी जीवनशैली का अभिन्न हिस्सा है। छत्तीसगढ़ के जनजातीय समुदायों के धर्म और सांस्कृतिक विश्वासों में पर्यावरण संरक्षण के अद्वितीय विधियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। प्राय: सभी जनजातीय समुदायों में प्रकृति और

उसके तत्वों के प्रति श्रद्धा और सम्मान की भावना विद्यमान होती है वे वृक्ष, नदियाँ और वन्यजीवों को पवित्र मानकर इनकी सुरक्षा करते हैं जिसे जनजातियों में प्रचलित टोटम एवं टैबू जैसी प्रथाएं प्रमाणित करती हैं।

निष्कर्ष

जनजातियां अपने रीति-रिवाजों के द्वारा चेतन एवं अचेतन रूप से जैव विविधता का शताब्दियों से संरक्षण करती आ रही हैं। वे अपनी प्रथाओं एवं परंपराओं का बहुत मजबूती के साथ पालन करते हैं अपने जनजातीय समूह के किसी सदस्य द्वारा लापरवाही या गलती से इसका उल्लंघन होने पर उसे समाज द्वारा दंडित किया जाता है। अध्ययन के दौरान यह भी पाया गया कि जनजातियां उन पौधों को स्पर्ष भी नहीं करती हैं जिनसे उनके कबीले का नाम जुड़ा होता है और वे उस पौधे के प्रति गहरी आस्था रखते हैं। जनजातीय समुदायों के पारंपरिक ज्ञान का विकास उनकी प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन विधि के दीर्घकालीन अनुभव से विकसित हुआ है| यही ज्ञान और जीवनशैली जैव विविधता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। परन्तु पिछले कुछ दशकों से आधुनिकता और औद्योगिकीकरण के कारण इन समुदायों की संस्कृति और जैव विविधता दोनों पर संकट के घने बादल छाये हुए हैं। इस संकट से निपटने के लिए सरकारी नीतियाँ, जनजातीय समुदायों का समर्थन और उनकी पारंपरिक विधियों का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। इस प्रकार यह शोध पत्र यह सुझाव देता है कि जनजातीय समुदायों की संस्कृति का जैव विविधता संरक्षण में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है| अत: ऐसी संस्कृति का संरक्षण और संवर्धन के लिए समुचित प्रयास किया जाना अपेक्षित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. बन्सो नुरूटी (2019) छत्तीसगढ़ की जनजातीय संस्कृति : माड़िया जनजाति के विशेष संदर्भ में. Int. J. Rev. and Res. Social Sci. 7(2): 497-501
2. एक्का नीलम संजीव और एक्का अमिया (2016) उत्तर पूर्वी छत्तीसगढ़ भाग-1 भारत के आदिवासीयों द्वारा उपयोग किए जाने वाली जंगली खाद्य पौधे, Research Journal of Recent Sciences, 5: 127-131
3. गुप्ता पूजा और खातून फरीन (2022) आदिवासी समुदायों की पारंपरिक प्रथाएं पर्यावरण संरक्षण में सहायता करती हैं Hans Shodh Sudha, 2(4): 21-30.
4. जैन सुनीता (2016) अनुसूचित जाति एवं जनजाति की आर्थिक स्थिति का समीक्षात्मक अध्ययन (दमोह जिले के विशेष संदर्भ में), International journal of review and research in social science, 4(4): 437-442.
5. कुमार सचिन एवं दुबे डॉ घनश्याम (2023) छत्तीसगढ़ के बिलासपुर संभाग के बैगा जनजाति में सांस्कृतिक परिवर्तन. International Journal of Reviews and Research in Social Sciences, 3(1): 259-9.
6. मीणा राजीव (2019) आदिवासीयों का पर्यावरण संरक्षण एवं सतत् विकास में योगदान और बेदखली की समस्या व समाधान. Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education 16(4):1643-1648..
7. पन्द्रों श्रीमती सुनिता (2016) जनजातीय समाज में परिवर्तन का प्रभाव. Historicity Research Journal, 3(1): 1-4

8. पात्रा लक्ष्मण (2020) आदिवासियों की भूमिका जैव विविधता. International Journal of Science and Research, 9(3): 1009-1012.
9. सिंह कुबेर गुरूपंच तथा चन्द्राकर राजु (2022) कमार जनजाति के सामाजिक आर्थिक स्थिति का भौगोलिक अध्ययन, international journal of reviews and research in social sciences, 10(3): 45.
10. सिंह टी.के. (2019) छत्तीसगढ़ में कंवर जनजाति एक सामान्य अध्ययन, International journal of review and research in social science.7(2): 87.
11. वर्मा राज कुमार एवं प्रेमी जितेन्द्र कुमार (2020) छत्तीसगढ़ में कमार जनजाति में गोदना कला, An International Bilingual Peer Reviewed Refereed Research Journal, 7(25): 79
12. यादव प्रमीला (2018) राजस्थान में आदिवासी जनजातियों की प्रमुख समस्याएं व उनका समाधान. JETIR, 5(6): 791-796.